बहुबचपन के साथ सामाजिक विज्ञान का शिक्षण

डॉ.अंजना त्रिवेदी

अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, भोपाल, मध्यप्रदेश

आजदफ़्तर के काम से एक सरकारी स्कूल गयी थी. स्कूल हमेशा ही काम से जाना होता है किन्तु इस बार जो घटा वह मन को कचोट रहा था. ये बताने की जरूरत नहीं है किसरकारी स्कूल में बच्चे कहाँ से औरकिनपरिस्थितियों से आते हैं. हम सब जानते है कि ये बच्चे प्रथम पीढ़ी के स्कूल जाने वाले बच्चे है.

देवेन्द्रका किस्सा उसकी जुबानी-

स्कूलमें घुसते ही दो बच्चे(उम्र 11-12 साल) भाग करमेरे पास आयेऔर उनमें से एक ने ख़ुशी से चहकते हुएकहा 'मेम आप ने मुझे पहचाना?'.

मैंने हंसकर कहा- 'हाँ देखा हुआ तो लग रहा, परयाद नहीं आ रहा है'. बच्चेने कहा –'मेममैं देवेन्द्र ना, आपके यहाँ अख़बार की रद्दी लेने आया था'

देवेन्द्र को याद करूं तब तक उसने दूसरा प्रश्न दागा–'मेम, और आपकेयहाँरद्दी औरइकट्ठी हो गयी है क्या ?'

मैंने कहा-'हाँ. तो.'

"मेम, मैंकलघर आऊंगा, आप किसी को भी मत देना".

'हाँ. तुम आजाना.'

'मेम, अभी 8रूपयेका भाव चल रहा है.'

'कोई नहीं, तुम ऐसे ही ले जाना.'

देवेन्द्रबहुतख़ुशी से थोड़ी दूर तकअपने दोस्त के साथ गया फिर वापस भागकर मेरे पास आया. कहा- "आपके यहाँ अख़बार की रद्दी कितने किलो होगी".

मैंने अंदाज से ही कहा –'करीबन 10 किलो.'

देवेन्द्र ने आगे पूछा – 'मेम आपके यहाँ कबाड़ भी है क्या ?'

मैंनेउसको अपने पास बैठाकर कहा -"यदि कबाड़होगा तो तुम ही लेकर जाना, मैं किसी को भी नही दूंगी".

मैंनेआगे पूछा– 'देवेन्द्र तुम ये काम कब करते हो ?'

उसने जवाब दिया –'मेम, सुबह स्कूल आने के पहले जब किसी का भी ठेला मिल जाता है तब,और रविवार को ज्यादा समय काम करते है.'

मैंने पूछा –'तुम इन पैसे का करते क्या हो ?'

देवेन्द्र ने बड़े आत्मविश्वास और गर्व के साथ कहा –'मेम, मैंने ट्यूशन लगवायी है, उसका खर्चा मैं ही उठाता हूँ. पैसा कभी बच जाता है तो छोटे भाई को कुछ दिला देता हूँ.'

मैंने पूछा – 'ट्यूशन में कितनी फीस देनी होती है ?'

उसने कहा '500रूपये.'

मैंने पूछा –'अच्छाये बताओ तुम्हेंपढ़ना अच्छा लगता है?'

देवेन्द्र ने अपनी मस्ती में ही कहा –'हाँ मेडम बहुत अच्छा. मैं बड़ा आदमी बनाना चाहता हूँ.'

मैंने कहा –'बड़ा आदमी में क्या बनना चाहते हो.'

देवेन्द्र ने बड़े रुतबे से कहा-'मेडम जी पुलिस.'

मैंने पूछ हीलिया- 'क्यों?'

उसने जवाब दिया –'मेडम, पुलिस जीप में आती है और खूब पैसा भी कमाती है ना.'

मैंने कहा –'अच्छा तो पैसे कमाना चाहते हो.''

देवेन्द्र ने कहा– हाँ, 'मेडम हमेशा थोड़ी कबाड़ी का काम करूंगा, फिर हमारा भी एक बंगला होगा.

मुझे उसकी हर बात अच्छी लग रही थी क्योंकि वह अपने लिए सपने देख रहा था. अपने काम को किसी काम से कमतर भीनहीं नाप रहा था.वह जो अभी काम कर रहा है वह उदास या दुखी होकर भी नहीं कर रहा था. उसे अपने आप पर विश्वास है कि ये दिन चुटकी में निकल जायेंगे और वह बड़ा आदमी बन जायेगा.

चिंतन के बिंदु-

नीति निर्माता, समाज सुधारक और शिक्षाविद भले ही बहुबचपन को नकारें, पर कामकाजी बच्चे एक जीवन में कितनी परतों का जीवन जी रहे होतेहैंये समझ पाना मुश्किल है.अपने लिए पोषकआहार,पढ़ने के लिए अतिरिक्त समयऔर जरुरी मदद येकहाँ से ले**कर आयें. अपने सम्मान को कितनी बार तिलांज**लि **देनी होती होगी इन्हें. काम के साथ पढ़ना, छोटे भाई – बहनों को** संभालना.सामान्य घरों **के बच्चों से इनकी किसी भी प्रकार से तुलना नहींकी जा सकती.सरकार भी ऐसे बच्चों के लिए किसी भी प्रकार की पुख्ता नीति का निर्माण नहीं कर पा रही है. पता नहीं कितने बच्चे देवेन्द्र जैसी हिम्मत के साथ अपनी मंजिल तक पहुचं पाते होंगे.**

इन कामकाजीबच्चों का जटिलता और चुनौती भरा बचपन हमारे विकसित समाज के लिए भी कई प्रश्न खड़े करता है.

बच्चे अपने परिवारों की विभिन्न सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के चलते अलग – अलग तरह के जीवन से रूबरू होते है. साथ ही एक बच्चा अपने एक ही दिन में विभिन्न दौर से गुजरता है. जरा सोच केर देखे दलित, पिछड़े परिवारों के बच्चों, लडकियों, कामगार बच्चों, गरीब बच्चों का बचपन सुबह से रात तक लगातार कितनी भिन्नता की परतों से भरा होता यानि बहुलता भरा है. आममध्यम वर्ग के बच्चों की तरह उनका बचपन सुविधापूर्ण, सुगम और एक जैसा नहीं होता, जहाँबच्चों को जीवन शैली के सारे संसाधन और सुरक्षा सहज ही उपलब्ध होते है. अपने घर में उनका बचपन अक्सर स्कूल से अलग होता है और श्रम के स्थान पर तो शायद बिल्कुल ही अलग. न तो राज्य, न परिवार और नहीं शिक्षक की जिम्मेदारी बच्चोंके स्कूल में आ जाने भर से ख़त्म होती है क्योंकि स्कूल के अलावा भी बच्चों का जीवन है. स्कूल में भी उसका बचपन किताबों की बोझ से भरा हो, अरुचिकर और रटंत वाला हो और बच्चों की दिनचर्या से लिंक नहीं करता है तो वह बहुत जल्दी ही शिक्षा से पृथक हो जाता है.

बहुबचपन और बचपन को जानें ---

यदि आप सवाल करें कि आखिर हम बहुबचपन पर बात क्यों कर रहे है ? तो इसका सरल सा जवाब होगा कि उनके जीवन के विभिन्न हिस्से कोहम छू ही नहीं पाते है. अपनी आजीविका कमाने के साथ –साथ अध्ययन करने वाले बच्चे का बचपन भी अलग –अलगपरिस्थितियों में अलग –अलग होता है. अपने कार्यक्षेत्र में अलग, स्कूलमें अलग और घर में उसका बचपन बिल्कुल ही अलग होता है यह बहुबचपन कहलाता है इन बच्चों के लिए नीतिगत कोई योजना सरकार की ओर से संचालित नहीं होती है. बहुबचपन को समझनेसे पहले बचपन को समझना आवश्यक है हमारे समाज में बचपन की कोई एक परिभाषा ही नहीं है.

अथार्त भिन्न –भिन्नस्थानों में बचपन का स्वरूप भिन्न भिन्न होना –

१- कभी आयु की कसौटी पर कसते है (13 वर्ष तक की अवधि को)
२- कभी क़ानूनी कसौटी (बच्चों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संधि पत्र – बच्चे 18 वर्ष से कम आयु वाले व्यक्ति के रूप में)
३- भारत में किशोरन्याय अधिनियम 14 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को बच्चा मानताहै.
४- भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 ए कहता है कि 6 से 14 वर्ष तक के प्रत्येक बच्चे को जैसा वह विधि द्वारा निधारित करे अनिवार्य और निशुल्क शिक्षा उपलब्ध कराएगा.
५- संविधान का अनुच्छेद 45 कहता है कि बच्चे 6 वर्ष के होने तक राज्य, सभी बच्चों को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल औरशिक्षा प्रदान करेगा.
६- बाल श्रमनिषेध और विनियमन अधिनियम 1986 के अंतर्गत जो 14 वर्ष का नहीं हुआ है या 14 वर्ष से कम आयु का है उसे बच्चा माना जाता है.

- भारतीय खनन अधिनियम 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति को बच्चा मानता है

- कभी विभिन्न संस्कृतियों में बाल्यावस्था को ग्रामीण और शहरी के रूप में भी जाना जाता है.

हमारे समाज में बच्चों की आयडेनटिटी को लेकर संकट बना हुआ है इसलिए बचपन को लेकर कोई एक परिभाषा ही नहीं है.

भारत की जनसंख्या बीते एक दशक में 18.1 करोड़ बढ़कर 1.21 अरब हो गई है उसमें सेभारत में दस करोड बाल मजदूरों में से डेढ करोड़ बच्चेमजदूरी कर रहे हैं ।

भारत में कितने बाल श्रमिक हैं, इसके बारे में बहुत प्रामाणिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं. इनकी संख्या 43 लाख से लेकर डेढ़करोड़ तक बताई जाती है. जो भी हो, इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में बहुत बड़े पैमाने पर बच्चों से काम लिया जाता है. छोटे खेतिहर किसान और मजदूर से लेकर कारीगर तक अपने बच्चों को बहुत कम उम्र से ही काम पर लगा देते हैं और इस तरह से वे परिवार पर आर्थिक बोझ होने के बजाय पारिवारिक आय बढ़ाने वाले बन जाते हैं. उन्हें या तो स्कूल भेजा ही नहीं जाता या फिर वे जल्दी ही स्कूल जाना छोड़ देते हैं. ऐसे बच्चों के अलावा एक बहुत बड़ी तादाद ऐसे बच्चों की है जिन्हें बंधुआ मजदूर की तरह जबरदस्ती काम पर लगा दिया जाता है. ईंट के भट्टे हों या ढाबे, आतिशबाजी का सामान बनाने का उद्योग हो या जरी बनाने और शॉल पर कढ़ाई करने का,कूड़ा-कचरा बीनना और साफ करना हो या फिर घरेलू नौकर की तरह काम करना, जीवन का कोई भी क्षेत्र बाल श्रम की भयावह उपस्थिति से बचा नहीं है.

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के मुताबिक, शिक्षा के व्यापक लक्ष्य हैं -- बच्चों के भीतर विचार और कर्म की स्वतंत्रता विकसित करना, दूसरों के कल्याण और उनकी भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता पैदा करना...आदि आदि। अब तक अपने ही उपायों द्वारा जी रहे मज़दूर वर्ग, आदिवासी, दलित और समाज के हाशिए पर रहने वाले अन्य समूहों के लिए इस शिक्षा के मायने क्या हैं? 'शिक्षा' से मज़दूर वर्ग को आखिर हासिल क्या होता है?

वास्तव में शिक्षा पर होने वाले विमर्श को इनकी वास्तविकताओं के सन्दर्भ में रखकर देखा जाए।

अध्ययनकी जरूरत – सामाजिक विज्ञानके अध्ययन को हम एक केन्द्रीय रूप में देखते है. सामाजिक विज्ञान को जिस रूप में उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6-8) में समाज, राजव्यवस्था और नागरिक सन्दर्भों में देखा जाता है उसके बारें में पड़ताल करने की जरुरत है. शैक्षणिक रूप से क्या इस विषय को सामाजिक विज्ञानों की ज्यादा लंबी, ज्यादा जानकारियों भरी और ज्यादा गहरी व्याख्या देकर उपयोगी बनाया जा सकता है या फिर जीवन अनुभव और उसके यथार्थ से जोड़कर एक सच्चा नागरिक बोध जगाना अर्थपूर्ण होगा?इस विषय के औचित्य पर कोई सवाल नहीं है पर तरीकों पर चिंतन आवश्यक है. क्या कोई ऐसा तरीका है जिसके द्वारा सामाजिक विज्ञान कोअलग ढंग सेरचा जा सके, जिसमें बच्चों के अनुभव, उसके सामाजिक, आर्थिक और दैनिकपरिस्थितियों को केंद्र में रख कर पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण करते हुए बच्चों को विभिन्न पद्धतियों के साथ अध्ययनकरवाया जा सकता है ?

दूसरी बात, "भारतीय संविधान में स्थापित" कुछ खास मूल्यों से बच्चों को परिचित कराने पर, "राष्ट्र की एकता और अंखडता" पर जोर दिया जाताहै पर बच्चोंके लिए ये मूल्य किस प्रकार के मायने रखते उनका अध्ययन करना आवश्यक है.बच्चों के मानस का अध्ययन करना आवश्यक है. जरुरत इस बात की है किसामाजिक विज्ञानबच्चों में संवैधानिक मूल्यों का विकास कर सके.

शिक्षा और बच्चे– शिक्षा का अर्थ हम सब स्कूल की दीवारों के भीतर ही देखते है और इन स्कूलों के भीतर होंगी जानकारियों से ठूंसी हुई जानकारियां.

कामकाजी और रोजगार की तलाश में आये बच्चों कोकई समस्याओं से निपटना होता है.बच्चों के दाखिलों, उनके स्कूल में बने रहने से जुड़ी समस्याओं, स्कूल के आधारभूत ढाँचों,

शिक्षा के स्तरों और कभी-कभी कक्षा की प्रक्रियाओं को शामिल किया गया है, पर इन अध्ययनों में विरले ही विद्यार्थियों के जीवन के मुद्दे और उनके समुदाय के मुद्दों को जगह मिली है। विकास के प्रयासों ने भी मोटे तौर पर समुदाय और शिक्षा केपारस्परिक सम्पर्क-क्षेत्र को सीमित कर दिया है।(शारदाबालगोपालन के अध्ययन काउल्लेख -सन्दर्भ [अंक 91] मेंप्रकाशित शिवानी तनेजा का आर्टिकल https://www.eklavya.in/magazine-activity/sandarbhहै)

शिक्षाविदों के रूप में हम इस बात को बखूबी जानते हैं कि अलग-अलग गरीब परिस्थितियों वाले हज़ारों बच्चों के लिए स्कूलों का अनुभव बहुत सकारात्मक नहीं रहा है। शिक्षकों द्वारा बच्चों को 'मन्दबुद्धि', 'पिछड़े' और 'असभ्य' कहा गया है। आदिवासी बच्चों के बारे में शारदा बालगोपालन का अध्ययन दिखाता है कि इन बच्चों के साथ खुले तौर पर होने वाला भेदभावपूर्ण व्यवहार किस तरह से शिक्षकों के पूर्वाग्रहों का नतीजा है। इस अध्ययन में शामिल दस में से नौ बच्चे शारीरिक हिंसा का शिकार हुए थे। झुग्गियों से आने वाले बच्चों के प्रति शिक्षकों की भाषा भी बहुत दमनकारी मालूम हुई। ये भेदभाव बच्चों केऔर उनके पालकों के मन में भी रच-बस जाते हैं। बहुत छोटी उम्र से ही बच्चे के अन्दर नाकाबिल होने का और स्कूल में अयोग्य होने का भाव पैदा हो जाता है। पढ़ाई से भी बच्चे का मन हट जाता है और फिर उसका इस बात से यकीन भी खत्म हो जाता है कि 'औपचारिक शिक्षा' उसके लिए है।"

शिक्षा का उपकरणीय दृष्टिकोण कक्षा में होने वाले निरर्थक अभ्यासों और गतिविधियों को अपनाकर, संवेदी क्षमताओं, जिज्ञासा को कुन्द करके और प्रतिस्पर्धात्मक रवैये को बढ़ावा देकर अपनाया जाता है। हम इस पद्धति के उदाहरण विभिन्न विषयों (गणित, भाषाएँ, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान) के विषय-वस्तु और शिक्षण में, मूल्यांकन व्यवस्थाओं में, तथ्यों और आँकड़ों को रटकर ज्यों-का-त्यों उतार देने की अपेक्षा में, मानव मस्तिष्क की मौलिक सम्भावनाओं को क्षीण करते जाने में देख सकते हैं। पाठ्यपुस्तकें लैंगिक, जातीय

और वर्गीय भेदभावों से भरी पड़ी हैं। हाशियाकृत समाजों के बच्चों के जिए गए अनुभवों की कक्षा में कोई जगह नहीं होती, इसकी बजाय बच्चों का ऐसी अंजान विषयवस्तु से वास्ता पड़ता हैजिसमें उनकी ज़िन्दगियों को नीची निगाह से देखा जाता है और उन्हें सक्रिय रूप से अपमानित किया जाता है। जब तक वर्तमान शैक्षणिक ढाँचों के अन्दर वंचित तबकों के विरुद्ध मौजूद वर्गीय पूर्वाग्रहों को चुनौती नहीं दी जाती तब तक पाठ्य-पुस्तकों और आकलन व्यवस्थाओं में बदलाव करने से थोड़ा-बहुत ही असर पड़ेगा।"

स्कूलीकरण' के सामने 'शिक्षा' का अर्थ क्या एक ऐसा उद्देश्य है जिसे टाला जा सकता है? शिक्षा एक अधिक न्यायपूर्ण, निष्पक्ष और मानवीय दुनिया बनाने के लिए कई चीज़ों को बदल तो नहीं सकती लेकिन वह इस प्रयास में सहयोग दे सकती है; या फिर वह वर्गीय भेद को और बढ़ाने का उपकरण बनकर लोगों की अवहेलना और दमन का आधार बन सकती है। क्या नागरिक समाज आवाज़ उठाने के लिए तैयार है?

यह विषय सेमिनार की प्रस्तुतिकरण के लिए ही नहीं है. हमेंकामकाजी बच्चों के लिए संवेदनशील होना चाहिए और नीतिगत बदलाव करना चाहिए जहाँ बच्चा पढाई का सपना तो पूरा कर सके साथ में बच्चा सामाजिक विज्ञान में दिए गयी थीम से अपना जुड़ाव भी महसूस कर सके. पाठ्यपुस्तक की किताब उसका हौसला और ताकत बने.

सामाजिक विज्ञान का शिक्षण – पिछलेदो दशक तक सामाजिक अध्ययन से विज्ञान कहने के लिए भी काफी संघर्ष और मशक्कत करनापड़ा है.कई शिक्षाविद, समाजशास्त्रियो ने लम्बे अध्ययनों के बाद ये निष्कर्ष निकला कियेविषय विज्ञान से कमतर नहीं है. उन्होंने बताया कि ये विषय वैज्ञानिक मनुष्य बनाने में मदद करता है इसमें पूर्वानुमान लगाया जा सकता है. ये विषय मानव की बेहतरी का सवाल उठाता है जिसकी पड़ताल हमें कदम कदम पर करनी चाहिए कि जो हम पढ़ रहे है वह व्यवाहरिक स्थिति का अध्ययन करवाता है.

सामाजिक विज्ञान, मानवीयजीवन की गरिमा के लिए आवश्यक स्वतंत्रता, समता, न्याय,जैसेबुनियादी मानव मूल्योंके लिए ज्ञान आधारित एक आवश्यक नजरिये का विकास करता है. सामाजिक विज्ञान सामाजिक जीवन से जोड़ता है. सामाजिकविज्ञान व्यक्ति के जीवन में सोचने –समझने,कल्पना करने, विश्लेष्ण करने और अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर देता है.

जब हम समाज की किसी परिघटना का अध्ययन करते है तो यह जरुरी हो जाता है कि इसके विभिन्न पहलूओं और सरोकारों को देखे, उनके पैटर्न को देखे,प्रयोग कर देख सकते है,पूर्वानुमान लगाये जा सकते है.

सामाजिक विज्ञान विषय के केंद्र में मनुष्य है और मनुष्य विविधतापूर्ण है तो जाहिर है कि एक विधि से पढ़ाई होही नहीं सकती है. हर बच्चे के अनुभव को जोड़ते हुए उसके सामजिक, आर्थिक पहलूओं को देखते हुए सामाजिक विज्ञान की विषय वस्तु से लिंक करना होगा और उसीसे बच्चों में विश्लेषण करने, तर्क करने, प्रश्न करने, सवालउठाने का हौसला आता है जो इस विषय का कौशल भीहै. इस कौशल को विकसित करने के लिए शिक्षण में विभिन्न विधियों का इस्तेमाल करनाजरुरी है. यह एक विधिद्वारा नहीं पढ़ाया जा सकता है. इसमें समूह चर्चा, अख़बारों की खबरों के द्वारा, रोजमर्रा की जिंदगी में घट रही घटना क्रम द्वारा उनके कारणों को जानने का प्रयास करना शामिल होना चाहिए. उदाहरण के लिए किसी इलाके में भूकम्पआता है तो उसके भोगौलिक कारणों को जानना, उससे प्रभावित लोगों की जिंदगी को क्षेत्र में जाकर जानना, तत्कालीन सरकारके कार्यों की जाँच पड़ताल करना और उससे अपने विचारों को लिखना जरुरी है. यदि उस स्थान पर नहीं भी जा पा रहे हो तो भूकम्प क्यों आता है ? कैसे आता है ? उसमें मानव जीवन की स्थिति को देखना आवश्यक है.मानव –त्रासदी में सरकार की भूमिका को देखना और उस पर आलोचनात्मक चिंतन करना जरुरी है.बच्चों को सोशल पोलिटिकल लाइफ में केवल राज्य और केंद्र की शक्तियों को पढने का क्या अर्थ है.

हर बच्चे को संवैधानिक मूल्यों के बारे में पता होना चाहिए और वह अपने व्यवहारिक जीवन में उसको देखने का नजरिया \दृष्टी विकसित कर सके . वह हर घटना\ पहलूओं को इस ट्यूब में डालकर टेस्ट कर सके किये संवैधानिक मूल्योंपर खरा है या नहीं.

अंत में, बहुबचपन को समझना और उस बचपन को सही मायने में सही दिशा देना है तो सामाजिक विज्ञान की विविध विधियों से पढ़ाना आवश्यक है. प्रथम पीढ़ी के स्कूल जाने वाले बच्चों के लिएहमारी जिम्मेदारी ज्यादा हो जाती है.

संदर्भ सूची –

१. Balgopalan Sarda (2008) Memories of tomorrow : Children, Labour and the panacea of formal Schooling , Journal of History of childhood and youth volume 2:1 ,The John Hopkins University.

२. शिवानी तनेजाhttps://www.eklavya.in/magazine-activity/sandarbh

३. *एनसीएफ2005, एन सी ई आर टी*

४. *राज, समाजऔर शिक्षा* , कृष्णकुमार, द मकमिलन कंपनीऑफ़ इन्डिया लिमिटेड

५. *प्राशिका -एकलव्य का प्राथमिक शिक्षा में अभिनव प्रयोग*, रत्न सागर प्रकाशन

६. *शिक्षा की बजाय* , जॉन होल्ट, एकलव्य प्रकाशन

७. *जश्न- ए -तालीम*, सुशील जोशी, एकलव्यप्रकाशन

८. *भारतीय शिक्षा और साक्षरता*, राजेन्द्रमोहन भटनागर,कल्याणीशिक्षा परिषद प्रकाशन